लेश्या द्वारा व्यक्तित्व रूपान्तरण

मुमुक्षु शांता जैन

मनुष्य जीवन का विश्लेषण हम जहाँ से भी शुरू करें, आगम सूक्त की अनुप्रेक्षा के साथ पहला प्रश्न उभरेगा— 'अणेगचित्ते खलु अयं पुरिसे"[1] मनुष्य अनेक चित्त वाला है यानि वह बदलता हुआ इन्द्रधनुषी व्यक्तित्व है। विविध स्वभावों से घिरे मनुष्य को किस बिन्दु पर विश्लेषित किया जाये कि वह अच्छा है या बुरा ? क्योंकि देश, काल व परिस्थिति के साथ बदलता हुआ मनुष्य कभी ईर्ष्यालु, छिद्रान्वेषी, स्वार्थी, हिंसक, प्रवंचक, मिथ्यादृष्टि के रूप में सामने आता है तो कभी विनम्र, गुणग्राही, निःस्वार्थी, अहिंसक, उदार, जितेन्द्रिय और तपस्वी के रूप में। आखिर इस वैविध्य का तत्त्व कहाँ है ? ऐसा कौन सा प्रेरक बिन्दु है जो न चाहते हुए भी व्यक्ति द्वारा बुरे कार्य करवा देता है ? ऐसा कौन सा आधार है जिसके बल पर एक संन्यासी बिना भौतिक सम्पदा के आनन्द के अक्षय स्रोत तक पहुँच जाता है और दूसरा भौतिक सम्पदा से घिरा होकर भी प्रतिक्षण अशान्त, बेचैन, कुण्ठित और दुःखाक्रान्त होकर जीता है।

ऐसे प्रश्नों का समाधान हम व्यवहार के स्तर पर नहीं पा सकते। जैन दर्शन ने चित्त के बदलते भूगोल को सम्यक् जानने के लिये और मनुष्य के बाह्य और आन्तरिक चेतना के स्तर पर घटित होने वाले व्यवहार को समझने के लिये लेश्या का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है।

जैन दर्शन में लेश्या का सिद्धान्त बहुत महत्त्वपूर्ण है। कर्म शास्त्रीय भाषा में लेश्या हमारे कर्म-बन्धन और मुक्ति का कारण है। यद्यपि आत्मा स्फटिक मणि के समान निर्मल और पारदर्शी है, पर लेश्या द्वारा आत्मा का कर्मों के साथ श्लेष चिपकाव होता है।[2] लेश्या द्वारा आत्मा पुण्य और पाप से लिप्त होती है।[3] कषाय द्वारा अनुरंजित योग प्रवृत्ति के द्वारा होने वाले भिन्न-भिन्न परिणामों को जो कृष्ण, नील आदि अनेक रंग वाले पुद्गल विशेष के प्रभाव होते हैं, लेश्या कही जाती है। आगम में लेश्या की परिभाषा की गयी है—"कषायोदयरंजिता योग प्रवृत्तिलेश्या।"[4] कर्म बन्धन के दो कारण हैं—कषाय और योग। कषाय होने पर लेश्या में चारों प्रकार के बन्धन होते हैं—प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश। प्रकृति और प्रदेश बन्ध योग से होता है और स्थिति तथा अनुभाग बन्ध कषाय से होता है।[5]

---

१. आयारो ३/४२

२. षट्खण्डागम (धवला) ७/२/१/३/७

३. पंचसंग्रह, प्राकृत १/१४२

४. सर्वार्थसिद्धि २/६, राजवार्तिक २/६/८

५. गोम्मटसार जीवकाण्ड ४९०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्मशास्त्रीय भाषा में लेश्या आस्रव और संवर से जुड़ी है। आस्रव का मतलब है दोषों को भीतर आने देने का रास्ता। जब तक व्यक्ति का मिथ्या दृष्टिकोण रहेगा, आकांक्षाएं प्रबल रहेंगी, बुद्धि-विवेक सोया रहेगा, मन, वचन और शरीर पर नियन्त्रण नहीं होगा, राग-द्वेष की भावना से मुक्त नहीं बन पाएगा, तब तक वह प्रतिक्षण कर्म-संस्कारों का संचय करता रहेगा। आगमों में लेश्या के लिये एक शब्द आया है—"कर्म निर्जर"[1] लेश्या कर्म का प्रवाह है। कर्म का अनुभाव-विपाक होता रहता है। इसलिये जब तक आस्रव नहीं रुकेगा तब तक लेश्याएँ शुद्ध नहीं होंगी, लेश्या शुद्ध नहीं होगी तो हमारे भाव, संस्कार, विचार और आचरण भी शुद्ध नहीं होंगे। इसलिये संवर की जरूरत है। संवर भीतर आते हुए दोष प्रवाह को रोक देता है। बाहर से अशुभ पुद्गलों का ग्रहण जब भीतर नहीं जाएगा, राग-द्वेष नहीं उभरेंगे, तब कषाय की तीव्रता मन्द होगी, कर्म बन्ध की प्रक्रिया रुक जाएगी।

हम दो व्यक्तित्वों से जुड़े हैं—१. स्थूल व्यक्तित्व, २. सूक्ष्म व्यक्तित्व। इस भौतिक शरीर पौद्गलिक शरीर से जो हमारा सम्बन्ध है, वह स्थूल व्यक्तित्व है। इसको जानने के साधन हैं—इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि। पर सूक्ष्म व्यक्ति को इन्द्रिय, मन एवं बुद्धि द्वारा नहीं जाना जा सकता। जैन दर्शन में स्थूल शरीर को औदारिक और सूक्ष्म शरीर को तैजस तथा कार्मण शरीर कहा है। आधुनिक योग साहित्य में स्थूल शरीर को फिजिकल बॉडी (Physical body) और सूक्ष्म शरीर को एथरिक बॉडी (Etheric body) तथा तैजस शरीर को एस्ट्रल बॉडी (Asteral body) कार्मण शरीर कहा है। लेश्या दोनों शरीर के बीच सेतु का काम करती है। यही वह तत्त्व है जिसके आधार पर व्यक्तित्व का रूपान्तरण, वृत्तियों का परिशोधन और रासायनिक परिवर्तन होता है।

लेश्या को जानने के लिये सम्पूर्ण जीवन का विकास क्रम जानना भी जरूरी है। हमारा जीवन कैसे प्रवृत्ति करता है? अच्छे, बुरे संस्कारों का संकलन कैसे और कहाँ से होता है? भाव, विचार, आचरण कैसे बनते हैं? क्या हम अपने आपको बदल सकते हैं? इन सबके लिये हमें सूक्ष्म शरीर तक पहुँचना होगा।

आगम साहित्य में सूक्ष्म व्यक्तित्व से स्थूल व्यक्तित्व तक आने के कई पड़ाव हैं, जिनमें सबसे पहला है—चैतन्य (मूल आत्मा) उसके बाद कषाय का तन्त्र, फिर अध्यवसाय का तन्त्र। यहाँ तक स्थूल शरीर का कोई सम्बन्ध नहीं है। ये केवल तैजस शरीर और कर्म शरीर से ही सम्बन्धित हैं। अध्यवसाय के स्पन्दन जब आगे बढ़ते हैं तब वे चित्त पर उतरते हैं, भावधारा बनती है, जिसे लेश्या कहते हैं। लेश्या के माध्यम से भीतरी कर्म रस का विपाक बाहर आता है तब पहला साधन बनता है, अन्तःस्रावी ग्रन्थि तंत्र।

अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के जो स्राव हैं वे कर्मों के स्राव से प्रभावित होकर आते हैं। भीतरी स्राव जो रसायन बनकर आता है उसे लेश्या अध्यवसाय से लेकर हमारे सारे स्थूल तंत्र तक यानी अन्तःस्रावी ग्रंथियों और मस्तिष्क तक पहुँचा देती है। ग्रंथियों के हार्मोन्स रक्त-

१. उत्तराध्ययन-अध्ययन ३४ टीका पृ० ६५०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संचार तंत्र के माध्यम से नाड़ी तंत्र के सहयोग से अन्तर्भाव, चिन्तन, वाणी, आचार और व्यवहार को संचालित और नियन्त्रित करते हैं। इस प्रकार चेतना के तीन स्तर बन गए—

१. अध्यवसाय का स्तर : जो अति सूक्ष्म शरीर के साथ काम करता है।
२. लेश्या का स्तर : जो विद्युत शरीर-तैजस शरीर के साथ काम करता है।
३. स्थूल चेतना का स्तर : जो स्थूल शरीर के साथ काम करता है।[१]

सूक्ष्म जगत् में सम्पूर्ण ज्ञान का साधन अध्यवसाय है। स्थूल जगत् में ज्ञान का साधन मन और मस्तिष्क को माना है। मन मनुष्य में होता है, विकसित प्राणियों में होता है, जिनके सुषुम्ना है, मस्तिष्क है पर अध्यवसाय सब प्राणियों में होता है। वनस्पति जीव में भी होता है। कर्मबन्ध का कारण अध्यवसाय है। असंज्ञी जीव मनशून्य, वचनशून्य और क्रियाशून्य होते हैं फिर भी उनके अठारह पापों का बन्ध सतत होता रहता है, क्योंकि उनके भीतर अविरति है, अध्यवसाय है।[२] लेश्या बिना स्नायविक योग के क्रियाशील रहती है। इसलिये लेश्या का बाहरी और भीतरी दोनों स्वरूप समझकर व्यक्तित्व का रूपान्तरण करना होता है।

लेश्या के दो भेद हैं—द्रव्य लेश्या और भाव लेश्या।[३] द्रव्य लेश्या पुद्गलात्मक होती है और भाव लेश्या आत्मा का परिणाम विशेष है, जो संक्लेश और योग से अनुगत है। मन के परिणाम शुद्ध-अशुद्ध दोनों होते हैं और उनके निमित्त भी शुभ-अशुभ दोनों प्रकार के होते हैं। निमित्त को द्रव्य लेश्या और मन के परिणाम को भाव लेश्या कहा है। इसीलिये लेश्या शुद्धि के भी दो कारण बतलाये हैं–निमित्त कारण और उपादान कारण। उपादान कारण है–कषाय की तीव्रता और मन्दता। निमित्त कारण है पुद्गल परमाणुओं का ग्रहण। दूसरे शब्दों में लेश्या का बाहरी पक्ष है योग, भीतरी पक्ष है कषाय। मन, वचन, काया की प्रवृत्ति द्वारा पुद्गल परमाणुओं का ग्रहण होता है। जिसमें वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श सभी होते हैं। वर्ण/रंग का मन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। रंगों की विविधता के आधार पर मनुष्य के भाव, विचार और कर्म सम्पादित होते हैं। इसलिये रंग के आधार पर लेश्या के छः प्रकार बतलाए गये हैं—

१. कृष्ण लेश्या, २. नील लेश्या, ३. कापोत लेश्या, ४. तैजस लेश्या, ५. पद्म लेश्या और ६. शुक्ल लेश्या।[४]

कृष्ण लेश्या वाले प्राणी में काले रंग की प्रधानता होती है। उसका दृष्टिकोण सम्यक् नहीं होता। उसमें प्रबल आकांक्षा होती है। प्रमाद अधिक होता है। शारीरिक, मानसिक और वाचिक क्रियाओं पर उसका नियन्त्रण नहीं होता है। स्वभाव से वह हिंसक, क्रूर; प्रकृति से क्षुद्र बना रहता है। बिना सोचे-समझे काम करना, इन्द्रियों पर विजय न पाना उसकी पहचान बन जाती है।

---

१. आभामण्डल-युवाचार्य महाप्रज्ञ पृ० १३, ४१

२. सूत्रकृतांग ४/१७

३. भगवतीसूत्र १२/५/१६

४. भगवतीसूत्र १९/१/१; स्थानांग ६/५०४; प्रज्ञापना १७/४/३१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नील लेश्या वाले प्राणी में नील रंग की प्रधानता अधिक होती है। वह ईर्ष्यालु, असहिष्णु, आग्रही, अज्ञानी, मायावी, निर्लज्ज, द्वेष बुद्धि से युक्त, रसलोलुप, सुखेच्छु होता है।

कापोत लेश्या वाले प्राणी में कापोत वर्ण की प्रधानता अधिक होती है। उसमें वाणी की वक्रता, आचरण का दुहरापन, अनेक दोषों को छुपाने की मनोवृत्ति होती है। मखौल करना, कटु-अप्रिय वचन बोलना, चोरी करना, मात्सर्यभाव रखना उसके विशेष लक्षण होते हैं।

तैजस लेश्या के प्राणी में लाल रंग की प्रधानता होती है। लाल रंग प्रधान व्यक्ति विनम्र, धैर्यवान, अचपल, आकांक्षा-रहित, जितेन्द्रिय, पापभीरु होता है। उसमें मुक्ति की गवेषणा होती है, पर-हितैषी होता है।

पद्म लेश्या में पीला रंग प्रधान होता है। क्रोध, मान, माया, लोभ की मनोवृत्ति अत्यन्त अल्प हो जाती है। उसमें चित्त की प्रसन्नता, आत्म-नियन्त्रण, अल्पभाषिता और जितेन्द्रियता का विकास होता है।

शुक्ल लेश्या श्वेत प्रधान होती है। शुक्ल लेश्या वाला प्राणी जितेन्द्रिय, प्रशान्तचित्त वाला होता है। उसके मन, वचन और कर्म में एकरूपता होती है।[1]

रंग को न केवल सैद्धान्तिक दृष्टि से व्याख्यायित किया गया है अपितु आज विज्ञान की सभी शाखा-प्रशाखाओं में रंग के महत्त्व पर प्रकाश डाला जा रहा है। भौतिकवादियों, रहस्यवादियों, मंत्र-शास्त्रियों, शरीर-शास्त्रियों एवं मनोवैज्ञानिकों ने अलग-अलग रूप से रंग का अध्ययन कर यह सिद्ध किया है कि यह चेतना के सभी स्तरों पर जीवन में प्रवेश करता है। रंग को जीवन का पर्याय माना गया है।

वैज्ञानिकों ने स्पेक्ट्रम के माध्यम से सात रंगों की व्याख्या की है। उनके अनुसार प्रकाश तरंग के रूप में होता है और प्रकाश का रंग उसके तरंग दैर्घ्य (Wave length) पर आधारित है। तरंग-दैर्घ्य और कम्पन की आवृत्ति (frequency) परस्पर में न्यस्त प्रमाण (inverse proportion) से सम्बन्धित हैं। यानि तरंग दैर्घ्य के बढ़ने के साथ कम्पन की आवृत्ति कम होती है और उसके घटने के साथ बढ़ती है। सूर्य का प्रकाश त्रिपार्श्व कांच (prism) में गुजरने पर प्रकाश विक्षेपण के कारण सात रंगों में विभक्त दिखाई देता है। उस रंग पंक्ति को वर्णपट–स्पेक्ट्रम (Spectrum) कहते हैं। स्पेक्ट्रम के सात रंग हैं–लाल, नारंगी, पीला, हरा, नीला, जामुनी और बैगनी। इसमें लाल रंग की तरंग दैर्घ्य सबसे अधिक होती है, बैगनी (violet) की सबसे कम। दूसरे शब्दों में लाल रंग की कम्पन आवृत्ति सबसे कम और बैगनी रंग की सबसे अधिक होती है। दृश्य प्रकाश में जो विभिन्न रंग दिखाई देते हैं, वे विभिन्न कम्पनों की आवृत्ति या तरंग दैर्घ्य के आधार पर होते हैं।

रंग और प्रकाश दो नहीं। प्रकाश का ४९वाँ प्रकम्पन रंग है प्रकाश का महासागर जो सूर्य से निकलता है वह शक्ति और ऊर्जा का महास्रोत होता है।

---

१. उत्तराध्ययन ३४/२१-३२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रहस्यवादियों (Occult Scientists) की दृष्टि में रंग की एकरूपता जो हम सृष्टि में चारों ओर देखते हैं वह (Divine mind) की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति है। यह प्रकाश तरंगों के रूप में (one life principle) की ब्रह्माण्डीय प्रस्तुति है।[१]

ओकल्ट साइंस (Occult Science) ने सात रंगों के आधार पर सात किरणें मानी है, जिन्हें वे जीवन विकास के आरोहण क्रम में स्वीकार करते हैं। प्रत्येक किरण को विकासवादी युग का प्रतीक माना है। सात किरणें सृष्टि के सात युगों को दर्शाती हैं । आध्यात्मिक ज्ञान, जिसे (Lords of light) माना जाता है और विकास का मार्गदर्शन करता है उसे सात किरणों की आत्मायें भी कहा जाता है। उनकी मान्यता है कि किरणें अनन्त शक्ति और उद्देश्य की पूर्णता हैं जो कि Supreme Source से निकलती हैं और जिसे सर्वशक्तिमान प्रज्ञा द्वारा निर्देशन मिलता है। सात ब्रह्माण्डीय किरणों में तीन प्रथम किरणों – लाल, नारंगी और पीली से सम्बन्धित प्रथम तीन युग बीत गए हैं। अब हम चौथे युग यानी हरे रंग में जी रहे हैं, जो बीच का रंग है। या यूँ कहें कि एक ओर संघर्ष, कटु अनुभव का निम्न युग और दूसरी ओर आत्मिक विकास तथा गुणों का श्रेष्ठ युग जिसके बीचोबीच हरा रंग है। इससे आगे भावी दृष्टिकोण नीली किरणों के उच्च प्रकम्पनों की ओर आगे बढ़ा है और यह विकास अधिकाधिक श्रेष्ठ स्थिति में Indigo और Violet तरंगों तक विकसित होता जाएगा, जब तक सप्तमुखी किरण विभाजन के अन्त तक हम नहीं पहुँच जाएँगे।[२]

रंगों के आधार पर मनुष्य की जाति, गुण, स्वभाव, रुचि, आदर्श आदि की व्याख्या करने की भी एक परम्परा चली। महाभारत में चारों वर्णों के रंग भिन्न-भिन्न बतलाएँ हैं। ब्राह्मणों का श्वेत, क्षत्रियों का लाल, वैश्यों का पीला और शूद्रों का काला।[४]

जैन साहित्य में चौबीस तीर्थंकरों के भिन्न-भिन्न रंग बतलाए गए। पद्मप्रभु और वासुपूज्य का रंग लाल; चन्द्रप्रभु और पुष्पदन्त का श्वेत; मुनिसुव्रत और अरिष्टनेमि का रंग कृष्ण; मल्लि और पार्श्वनाथ का रंग नीला और शेष सोलह तीर्थंकरों का रंग सुनहरा माना गया है[५]

ज्योतिष विद्या के अनुसार ग्रह मानव के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं। उनकी विपरीत दशा में सांसारिक और आध्यात्मिक अभ्युदय में विविध अवरोध उत्पन्न होते हैं। इन अवरोधों को निष्क्रिय बनाने के लिये ज्योतिष शास्त्री अमुक ग्रह को प्रभावित करने वाले अमुक रंग के ध्यान का प्रावधान बताते हैं, विभिन्न रंगों के रत्न व नगों के प्रयोग के लिये कहते हैं।

शरीर शास्त्री मानते हैं कि रंग हमारे जीवन की आन्तरिक व्याख्या है अनेक प्रयोगों द्वारा यह ज्ञात किया जा चुका है कि रंगों का व्यक्ति के रक्तचाप, नाड़ी और श्वसन गति एवं

---

१. The Power of the Rays SGJ Ouseley P. 43

२. Colour Meditations, SGJ Ouseley P. 15

.३ महाभारत शान्तिपर्व २८८/५

४. अभिधान चिन्तामणि १/४९

५. Colour in the Treatment of Disease, J. Dodson Hesse

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मस्तिष्क के क्रियाकलापों पर अन्य जैविकी क्रियाओं पर विभिन्न प्रभाव पड़ता है। प्रो० एलेक्जेन्डर रॉस का मानना है कि रंग की विद्युत-चुम्बकीय ऊर्जा किसी अज्ञात रूप में हमारी पिच्यूटरी (Pituitary) और पीनियल (Pineal) ग्रंथियों तथा मस्तिष्क की गहराई में विद्यमान हायपोथेलेमस (Hypothalamus) को प्रभावित करती है। वैज्ञानिकों के अनुसार हमारे शरीर के ये अवयव अन्तःस्रावी ग्रंथि तन्त्र का नियमन करते हैं जो स्वयं शरीर के अनेक मूलभूत प्रतिक्रियाओं का नियन्त्रण करते हैं। रंग हमारे शरीर, मन, विचार और आचरण से जुड़ा है। सूर्य किरण या रंग चिकित्सा के अनुसार शरीर रंगों का पिण्ड है। हमारे शरीर के प्रत्येक अवयव का अलग-अलग रंग है। सूक्ष्म कोशिकाएं भी रंगीन हैं। वाणी, विचार, भावना सभी कुछ रंगीन है। इसीलिये जब कभी शरीर में रंगों के प्रकम्पनों का संतुलन बिगड़ जाता है तो व्यक्ति अस्वस्थ हो जाता है। रंग चिकित्सा पुनः रंगों का सामंजस्य स्थापित करके स्वस्थता प्रदान करती है।[१]

आज के मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि व्यक्ति के अन्तर्मन को, अवचेतन मन को और मस्तिष्क को सबसे अधिक प्रभावित करने वाला तत्त्व है—रंग। रंग स्वभाव को बतलाने का सही मार्गदर्शक है। मनोविज्ञान ने रंगों के आधार पर व्यक्तित्व का विश्लेषण किया है। मुख्यतः व्यक्तित्व के दो प्रकार हैं—

१ बहिर्मुखी, २. अन्तर्मुखी। रंग विशेषज्ञ एन्थोनी एल्डर का कहना है कि बहिर्मुखी जीवन लालिमा प्रधान होता है। अन्तर्मुखी जीवन में नीलाकाश जैसी उदात्त मनःस्थिति होती है। पीले रंग को कर्मठता, तत्परता और उत्तरदायित्व निर्वाह की भाव चेतना का प्रतीक माना है। हरे रंग को बुद्धिमत्ता और स्थिरता का प्रतिनिधि माना है। एल्डर कहते हैं कि स्वभावगत विशेषताओं को घटाने-बढ़ाने के लिये उन रंगों का उपयोग करना चाहिए, जिनमें अभीष्ट विशेषताओं का समावेश है।

एस० जी० जे० ओसले के अनुसार—रंग के सात पहलू बताए गए हैं : रंग—१. शक्ति देता है, २. चेतनाशील होता है, ३. चिकित्सा करता है, ४. प्रकाशित करता है, ५. आपूर्ति करता है, ६. प्रेरणा देता है तथा ७. पूर्णता प्रदान करता है।[२]

हेल्थ रिसर्च पब्लिकेशन, केलिफोर्निया द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट में यह सिद्ध किया है कि बहिर्मुखी लोग गर्म रंग पसन्द करते हैं। अन्तर्मुखी लोग ठण्डे रंग पसन्द करते हैं क्योंकि उनको बाहरी उत्तेजकों की आवश्यकता नहीं होती है। भावना प्रधान व्यक्ति रंग के प्रति मुक्तरूप से प्रतिक्रिया करते हैं। भावनाहीन व्यक्ति को प्रायः रंग से आघात पहुँचता है। ये कठोर व्यक्तित्व वाले होते हैं और रंग के श्रेष्ठ व सूक्ष्म प्रकम्पनों से अप्रभावित रहते हैं।[३]

---

१. Colour Meditations SGJ Ouseley, P. 17

२. Colour Healing From "the Aura & What it Means to You"

३. प्रज्ञापना १७/४/४७; स्थानांग ३/४/२२०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कौन-सा रंग हमारे व्यक्तित्व पर कैसा प्रभाव डालता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि रंग किस प्रकार का है। भावों को समझने के लिये भगवान् महावीर ने लेश्या को शुभ-अशुभ, रूक्ष-स्निग्ध, ठण्डा-गर्म, प्रशस्त-अप्रशस्त बतलाया है।[१] आज के रंग विज्ञान में भी लेश्या का संवादी सूत्र उपलब्ध होता है। रंग के दो प्रकार बतलाए हैं—चमकदार-धुंधले, अन्धकारमय-प्रकाशमय, गर्म-ठण्डे। लेश्या की प्रकृति व्यक्तित्व की व्याख्या करती है। कृष्ण, नील व कापोत वर्ण यदि प्रशस्त है, चमकदार है तो वे शुभ माने जाएंगे और पीला, लाल और सफेद रंग यदि अप्रशस्त, धुंधले होंगे तो वे अशुभ माने जाएंगे। शुभता और अशुभता रंगों की चमक पर निर्भर है।

नमस्कार मंत्र के जप के साथ जिन रंगों की कल्पना की जाती है उनसे भी यही तथ्य सामने आता है। जैसे—

णमो अरिहन्ताणं	श्वेत रंग,
णमो सिद्धाणं	लाल,
णमो आयरियाणं	पीला,
णमो उवज्झायाणं	हरा,
णमो लोए सव्व साहूणं	काला।[२]

लेश्या के सन्दर्भ में कृष्ण लेश्या को सर्वाधिक निकृष्ट माना गया है पर मुनि धर्म के साथ जुड़ा कृष्ण वर्ण प्रशस्त रंग का वाचक है। वैदिक साधना पद्धति से ब्रह्मा की उपासना लाल रंग से की जाती है क्योंकि लाल रंग निर्माता का रंग है। विष्णु की उपासना काले रंग से की जाती है क्योंकि काला रंग संरक्षण का माना गया है। महेश की श्वेत रंग से क्योंकि श्वेत रंग संहार करने वाला है। इसीलिये ध्यान करते समय रंग-श्वास में चमकदार रंगों का श्वास लेने और उनसे अपने आपको भावित करने की बात कही जाती है।

जैन आगमों में लेश्या शुद्धि के लिये कई साधन बतलाए हैं। उनमें ध्यान विशेष उल्लेखनीय है। प्रेक्षाध्यान पद्धति में भाव परिवर्तन के लिये, चेतना के जागरण के लिये रंगों का ध्यान महत्त्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि रंग का हमारे पूरे जीवन पर प्रभाव पड़ता है। प्रेक्षाध्यान साधना पद्धति इस आधुनिक ध्यान पद्धतियों में एक है। उसमें युवाचार्य महाप्रज्ञ ने लेश्याध्यान को एक महत्त्वपूर्ण अंग माना है।

ध्यान में साधक चैतन्य केन्द्रों पर चित्त को एकाग्र कर वहाँ निश्चित रंगों का ध्यान करता है। ध्यान की पृष्ठभूमि में वह कायोत्सर्ग, अन्तर्यात्रा, दीर्घश्वास, शरीर-प्रेक्षा, चैतन्य केन्द्र प्रेक्षा आदि को भी अच्छी तरह से साध लेता है।

चैतन्य केन्द्र हमारी चेतना और शक्ति की अभिव्यक्ति के स्रोत हैं। ये जब तक नहीं जागते, तब तक कृष्ण, नील, कापोत तीन प्रशस्त लेश्याएं काम करती रहती हैं। व्यक्तित्व

१. नवकारसारस्तवन, गाथा ७

२. लेश्या ध्यान—युवाचार्य महाप्रज्ञ पृ० ५३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बदलाव के लिये हमें इन लेश्याओं का शुद्धीकरण करना होगा। रंग ध्यान द्वारा चैतन्य केन्द्रों को जगाना होगा क्योंकि केन्द्र (चक्र) रंग शक्ति के विशिष्ट स्रोत हैं। प्रत्येक चक्र भौतिक वातावरण और चेतना के उच्च स्तरों में से अपनी विशिष्ट रंग किरणों के माध्यम से प्राण ऊर्जा की विशिष्ट तरंग को शोषित करता है।

लेश्या ध्यान में आनन्द केन्द्र पर हरे रंग का, विशुद्धि केन्द्र पर नीले रंग का, दर्शन केन्द्र पर अरुण रंग का, ज्ञान केन्द्र पर पीले रंग का तथा ज्योति केन्द्र पर सफेद रंग का ध्यान किया जाता है।[१]

कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं अशुभ हैं इसलिये उन्हीं केन्द्रों पर विशेष रूप से ध्यान किया जाता है जिनसे तैजस, पद्म और शुक्ल लेश्याएं जागती हैं। इसलिये तीन शुभ लेश्याओं का दर्शन केन्द्र, ज्ञान केन्द्र और ज्योति केन्द्र पर क्रमशः लाल, पीला और सफेद रंग का ध्यान किया जाता है। इन तीनों को प्रशस्त रंगों के रूप में स्वीकार किया गया है।[२]

तेजोलेश्या: ध्यान—तेजोलेश्या का ध्यान जब किया जाता है तो हम दर्शन केन्द्र पर बाल सूर्य जैसे लाल रंग का ध्यान करते हैं। लाल रंग अग्नि तत्त्व से संबंधित है जो कि ऊर्जा का सार है। यह हमारी सारी सक्रियता, तेजस्विता, दीप्ति, प्रवृत्ति का स्रोत है।

दर्शन केन्द्र पिच्यूटरी ग्लैण्ड (Pituitarygland) का क्षेत्र है, जिसे मास्टर ग्लैण्डर (Master gland) कहा जाता है, जो अनेक ग्रंथियों पर नियन्त्रण करती है। पिच्यूटरी ग्लैण्ड सक्रिय होने पर एड्रीनल ग्रंथि नियन्त्रित हो जाती है, जिसके कारण उभरने वाले काम वासना, उत्तेजना, आवेग आदि अनुशासित हो जाते हैं।

दर्शन केन्द्र पर अरुण रंग का ध्यान करने से तैजस लेश्या के स्पन्दनों की अनुभूति से अन्तर्जगत् की यात्रा प्रारम्भ होती है। आदतों में परिवर्तन शुरू होता है। मनोविज्ञान बताता है कि लाल रंग से आत्मदर्शन की यात्रा शुरू होती है। आगम कहता है—अध्यात्म की यात्रा तेजोलेश्या से शुरू होती है। इससे पहले कृष्ण, नील व कापोत तीन अशुभ लेश्याएं काम करती हैं, इसलिये व्यक्ति अन्तर्मुखी नहीं बन पाता।

तैजस लेश्या/तैजस शरीर जब जगता है तब अनिर्वचनीय आनन्दानुभूति होती है। पदार्थ प्रतिबद्धता छूटती है। मन शक्तिशाली बनता है। ऊर्जा का ऊर्ध्व गमन होता है। आदमी में अनुग्रह विग्रह (वरदान और अभिशाप) की क्षमता पैदा होती है।[३] सहज आनन्द की स्थिति उपलब्ध होती है। इसलिये इस अवस्था को "सुखासिका" कहा गया है। आगमों में लिखा है कि विशिष्ट ध्यान योग की साधना करने वाला एक वर्ष में इतनी तेजोलेश्या को उपलब्ध होता है जिससे उत्कृष्टतम भौतिक सुखों की अनुभूति अतिक्रान्त हो जाती है। उस आनन्द की तुलना किसी भी भौतिक पदार्थ से नहीं की जा सकती।[४]

---

१. आभामण्डल—युवाचार्य महाप्रज्ञ पृ० ८५

२. भगवती १५/२३/७२६

३. भगवती १४/९/१२/७०७

४. स्थानांग ४/७०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेजोलेश्या और अतीन्द्रिय ज्ञान का भी गहरा संबंध है। तेजोलेश्या की विद्युत धारा से चैतन्य केन्द्र जागृत होते हैं और इन्हीं में अवधि ज्ञान अभिव्यक्त होता है।

पद्मलेश्या: ध्यान—पद्मलेश्या का रंग पीला है। पीला रंग न केवल चिन्तन, बौद्धिकता व मानसिक एकाग्रता का प्रतीक है, बल्कि धार्मिक कृत्यों में की जाने वाली भावनाओं से भी संबंधित है। पीला रंग मानसिक प्रसन्नता का प्रतीक है। भारतीय योगियों ने इसे जीवन का रंग माना है। सामान्य रंग के रूप में यह आशावादिता, आनन्द और जीवम के प्रति संतुलित दृष्टिकोण को बढ़ाता है।

मनोविज्ञान मानता है कि पीले रंग से चित्त की प्रसन्नता प्रकट होती है और दर्शन शक्ति का विकास होता हैं। दर्शन का अर्थ है—साक्षात्कार।

लेश्याध्यान में पीले रंग का ध्यान केन्द्र पर किया जाता है। ज्ञान केन्द्र शरीर शास्त्रीय भाषा में बृहत् मस्तिष्क (Cortex) का क्षेत्र है। हठयोग में जिसे सहस्रार चक्र कहा जाता है। जब हम चमकते हुए पीले रंग का ध्यान करते हैं तब जितेन्द्रिय होने की स्थिति निर्मित होती है। कृष्ण और नील लेश्या में व्यक्ति अजितेन्द्रिय होता है। पद्मलेश्या के परमाणु ठीक इसके विपरीत हैं। पद्मलेश्या ऊर्जा के उत्क्रमण की प्रक्रिया है। इसके जागने पर कषाय चेतना सिमटती हैं। आत्म नियन्त्रण पैदा होता है।

शुक्ल लेश्या: ध्यान—शुक्ल लेश्या का ध्यान ज्योति केन्द्र पर पूर्णिमा के चन्द्रमा जैसे श्वेत रंग में किया जाता है। श्वेत रंग पवित्रता, शान्ति, सादगी और निर्वाण का द्योतक है। शुक्ल लेश्या उत्तेजना, आवेश, आवेग, चिन्ता, तनाव, वासना, कषाय, क्रोध आदि को शान्त करती है।

लेश्या ध्यान का लक्ष्य है—आत्मसाक्षात्कार। शुक्ल लेश्या द्वारा इस लक्ष्य तक पहुँचा जा सकता है। यहाँ से भौतिक और आध्यात्मिक जगत् का अन्तर समझ में आने लग जाता है। आगम के अनुसार शुक्ल ध्यान की फलश्रुति है—अव्यथ चेतना, अमूढ़ चेतना, विवेक चेतना और व्युत्सर्ग चेतना।[1]

शरीर शास्त्रीय दृष्टि से ज्योति केन्द्र का स्थान पिनियल ग्रंथि (Pineal gland) है। मनोविज्ञान का मानना है कि हमारे कषाय, कामवासना, असंयम, आसक्ति आदि संज्ञाओं के उत्तेजन और उपशमन का कार्य अवचेतन मस्तिष्क हायपोथेलेमस (Hypothalamus) से जो होता है उसके साथ इन दोनों केन्द्रों का गहरा संबंध है। हाइपोथेलेमेस का सीधा संबंध पिच्यूटरी और पिनियल के साथ है।

विज्ञान बताता है १२-१३ वर्ष की उम्र के बाद पिनियल ग्लैण्ड निष्क्रिय होना शुरू हो जाता है जिसके कारण क्रोध, काम, भय आदि संज्ञाएं उच्छृंखल बन जाती हैं। अपराधी मनोवृत्ति जागती है। जब ध्यान द्वारा इस ग्रन्थि को सक्रिय किया जाता है तो एक सन्तुलित व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

१. प्रज्ञापना १७/४/३२

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

शुक्ल लेश्या का ध्यान शुभ मनोवृत्ति की सर्वोच्च भूमिका है। प्राणी उपशान्त, प्रसन्न-चित्त और जितेन्द्रिय बन जाता है। मन, वचन और कर्म की एकरूपता सध जाती है। सदैव स्वधर्म और स्व-स्वरूप में लीन रहता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि लेश्या ध्यान से रासायनिक परिवर्तन होते हैं। पूरा भाव संस्थान बदलता है। उसके वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श सभी कुछ बदलता है। व्यक्ति जब तक मूर्च्छा में जीता है, तब तक उसे बुरे भाव, अप्रिय रंग, असह्य गन्ध, कड़वा रस, तीखा स्पर्श बाधा नहीं डालते, पर जब मूर्च्छा टूटती है, विवेक जागता है तब वह अशुभ वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श से विरक्त होता है, उन्हें शुभ में बदलता है।

यद्यपि लेश्या ध्यान हमारी अन्तिम मंजिल नहीं। हमारा अन्तिम उद्देश्य तो लेश्यातीत बनना है, पर इस तक पहुँचने के लिये हमें अशुभ से शुभ लेश्याओं में प्रवेश करना होगा, जिसके लिये लेश्याध्यान आध्यात्मिक विकास के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण पड़ाव है।

ध्यान की एकाग्रता, तन्मयता और ध्येय-ध्याता में अभिन्नता प्राप्त हो जाने पर ही आत्म-विकास की दिशाएं खुल सकती हैं।

●

जैन विश्व भारती
लाडनूं (राज०) ३४१३०६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org